

६९. श्रीगुरुदत्तमुनेराख्यानम्

नत्वा पंच गुरून्भक्त्या प्रोल्लसत्केवलाश्रित्ये। गुरुदत्तमुनेर्वचि चरित्रं भुवनोत्तमम् ॥१॥
 हस्तिनागपुरे धीमान् जिनधर्मधुरन्धरः। राजा विजयदत्ताख्यो विजया प्राणवल्लभा ॥२॥
 तयोः पुत्रोत्तिगंभीरो धीरोभूद्गुरुदत्तवाक्। पूर्वपुण्येन सम्पूर्णो रूपलावण्यमण्डितः ॥३॥
 तस्मै विजयदत्तोसौ राजा राज्यश्रियं निजाम्। दत्त्वा स्वयं मुनिर्जातो गुरुं नत्वा दिगम्बरम् ॥४॥
 लाटदेशेऽथ विख्याते द्रोणीमत्पर्वतान्तिके। सुधीश्चन्द्रपुरीपुर्या चन्द्रकीर्तिर्महीपतिः ॥५॥
 चन्द्रलेखा महाराज्ञी सुताभयमती सती। तेन श्रीगुरुदत्तेन परिणेतुं प्रयाचिता ॥६॥
 न दत्ता चन्द्रकीर्त्याख्यभूभुजा निजदेहजा। ततः कोपात्समागत्य स सैन्यो गुरुदत्तकः ॥७॥

६९. गुरुदत्त मुनि की कथा

जिनकी कृपा से केवलज्ञानरूपी लक्ष्मी प्राप्त हो सकती है, उन पंच परमेश्वरी-अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओं को नमस्कार कर गुरुदत्त मुनि का पवित्र चरित लिखा जाता है ॥१॥

गुरुदत्त हस्तिनापुर के धर्मात्मा राजा विजयदत्त की रानी विजया के पुत्र थे। बचपन से ही इनकी प्रकृति में गम्भीरता, धीरता, सरलता तथा सौजन्यता थी। सौन्दर्य में भी वे अद्वितीय थे। अस्तु, पुण्य की महिमा अपरम्पार है ॥२-३॥

विजयदत्त अपना राज्य गुरुदत्त को सौंपकर स्वयं मुनि हो गए और आत्महित करने लगे। राज्य की बागडोर गुरुदत्त ने अपने हाथ में लेकर बड़ी सावधानी और नीति के साथ शासन आरम्भ किया। प्रजा उनसे बहुत खुश हुई वह अपने नये राजा को हजार-हजार साधुवाद देने लगी। दुःख किसे कहते हैं, यह बात गुरुदत्त की प्रजा जानती ही न थी। कारण-किसी को कुछ, थोड़ा भी कष्ट होता था तो गुरुदत्त फौरन ही उसकी सहायता करता। तन से, मन से और धन से वह सभी के काम आता था ॥४॥

लाट देश में द्रोणीमान पर्वत के पास चन्द्रपुरी नाम की एक सुन्दर नगरी बसी हुई थी। उसके राजा थे चन्द्रकीर्ति। उनकी रानी का नाम चन्द्रलेखा था। उनके अभयमती नाम की एक पुत्री थी। गुरुदत्त ने चन्द्रकीर्ति से अभयमती के लिए प्रार्थना की कि वे अपनी कुमारी का ब्याह उसके साथ कर दें परन्तु चन्द्रकीर्ति ने उनकी इस बात से साफ इनकार कर दिया, वे गुरुदत्त के साथ अभयमती का ब्याह करने को राजी न हुए। गुरुदत्त ने इससे कुछ अपना अपमान हुआ समझा। चन्द्रकीर्ति पर उसे गुस्सा आया। उसने उसी समय चन्द्रपुरी पर चढ़ाई कर दी और उसे चारों ओर से घेर लिया। कुमारी अभयमती गुरुदत्त पर पहले ही से मुग्ध थी और जब उसने उसके द्वारा चन्द्रपुरी का घेरा जाना सुना तो वह अपने पिता के पास आकर बोली-पिताजी! अपने सम्बन्ध में मैं आपसे कुछ कहना उचित नहीं समझती, पर मेरे संसार को सुखमय होने में कोई बाधा या विघ्न न आए। इसलिए कहना या प्रार्थना करना उचित जान पड़ता है क्योंकि मुझे दुःख में देखना तो आप सपने में भी पसन्द नहीं

समन्ताद्वेष्टयामास शीघ्रं चन्द्रपुरीं महान्। तच्छ्रुत्वाभयमत्याख्या तदासक्ता सुता जगौ ॥८॥
 तातं प्रति प्रभो देहि गुरुदत्ताय मां सुधीः। ततस्तेन नरेन्द्रेण तस्मै दत्ता सुतोत्सवैः ॥९॥
 तदा श्रीगुरुदत्तस्य प्रोक्तं सर्वजनैरिति। अस्मिन्द्रोणीमति ख्याते पर्वते भो नरेश्वर ॥१०॥
 व्याघ्रः संतिष्ठते देव पापी प्राणिभयंकरः। तेनायं भो महाधीर देशश्चोत्त्रासितोखिलः ॥११॥
 तच्छ्रुत्वा स्वजनैः सार्द्धं गत्वा तेन प्रवेगतः। व्याघ्रः संवेष्टितः सोपि गुहां नष्टा प्रविष्टवान् ॥१२॥
 गुहामध्ये तदा क्षिप्त्वा तेन काष्ठानि भूरिशः। तद्द्वारे च तथा तीव्रो वह्निं प्रज्वालितो महान् ॥१३॥
 ततो व्याघ्रो महाकष्टान्मृत्वा चन्द्रपुरीपुरे। विप्रस्य भरताख्यस्य विश्वदेव्याः स्त्रियोभवत् ॥१४॥
 पुत्रोसौ कपिलो नाम महाक्रूराशयः पुनः। पूर्वाभ्यासाश्रिता जन्तोः प्रायशो भवति क्रिया ॥१५॥
 तयोस्तदा महाभोगान्नित्यं भुञ्जानयोर्मुदा। संजातो गुरुदत्ताख्याऽभयमत्याः सुतोत्तमः ॥१६॥
 सुधीः सुवर्णभद्राख्यं स्वगुणैस्तर्पिताखिलः। रूपसौभाग्यसद्भाग्य-मंडितो विमलाशयः ॥१७॥

करेंगे। वह प्रार्थना यह है कि आप गुरुदत्त जी के साथ ही मेरा ब्याह कर दें, इसी में मुझे सुख होगा। उदार-हृदय चन्द्रकीर्ति ने अपनी पुत्री की बात मान ली। इसके बाद अच्छा दिन देख खूब आनन्दोत्सव के साथ उन्होंने अभयमती का ब्याह गुरुदत्त के साथ कर दिया। इस सम्बन्ध से कुमार और कुमारी दोनों ही सुखी हुए। दोनों की मनचाही बात पूरी हुई ॥५-९॥

ऊपर जिस द्रोणीमान पर्वत का उल्लेख हुआ है, उसमें एक बड़ा भयंकर सिंह रहता था। उसने सारे शहर को बहुत ही आतंकित कर रखा था। सबके प्राण सदा मुट्ठी में रहा करते थे। कौन जाने कब आकर सिंह खा ले, इस चिन्ता से सब हर समय घबराए हुए से रहते थे। इस समय कुछ लोगों ने गुरुदत्त से जाकर प्रार्थना की कि राजाधिराज, इस पर्वत पर एक बड़ा भारी हिंसक सिंह रहता है। उससे हमें बड़ा कष्ट है इसलिए आप कोई ऐसा उपाय कीजिए, जिससे हम लोगों का कष्ट दूर हो ॥१०-११॥

गुरुदत्त उन लोगों को धीरज बँधाकर आप अपने कुछ वीरों को साथ लिए पर्वत पर पहुँचा। सिंह को उसने सब ओर से घेर लिया। पर मौका पाकर वह भाग निकला और जाकर एक अँधेरी गुफा में घुसकर छिप गया। गुरुदत्त ने तब इस मौके को अपने लिए और भी अच्छा समझा। उसने उसी समय बहुत से लकड़े गुफा में भरवाकर सिंह के निकलने का रास्ता बन्द कर दिया और बाहर गुफा के मुँह पर भी एक लकड़ों का ढेर लगवा कर उसमें आग लगवा दी। लकड़ों की खाक के साथ-साथ उस सिंह की भी देखते-देखते खाक हो गयी। सिंह बड़े कष्ट के साथ मरकर इसी चन्द्रपुरी में भरत नाम के ब्राह्मण की विश्वदेवी स्त्री के कपिल नाम का लड़का हुआ। वह जन्म से ही बड़ा क्रूर हुआ और यह ठीक भी है कि पहले जैसा संस्कार होता है, वह दूसरे जन्म में भी आता है ॥१२-१५॥

इसके बाद गुरुदत्त अपनी प्रिया को लिए राजधानी में लौट आया। दोनों नव दम्पति बड़े सुख से रहने लगे। कुछ दिनों बाद अभयमती के एक पुत्र ने जन्म लिया। इसका नाम रखा गया सुवर्णभद्र। यह सुन्दर था, सरलता और पवित्रता की प्रतिमा था और बुद्धिमान् था। इसीलिए सब

दत्त्वा तस्मै निजं राज्यं स राजा गुरुदत्तवाक्। जिनेन्द्रचरणाम्भोज-सेवनैकमधुवतः ॥१८॥
 त्रिधा वैराग्यसंयुक्तो मुनिर्भूत्वा निरंजनः। एकाकी विहरन्स्वामी जिनतत्त्वविदाम्बरः ॥१९॥
 कपिलक्षेत्रमागत्य कायोत्सर्गेण संस्थितः। तदाऽसत्कर्मयोगेन ब्राह्मणः कपिलः कुधीः ॥२०॥
 भोजनं मे गृहीत्वा त्वं समागच्छेद्दुतं प्रिये। इत्युक्त्वा कपिलो भार्या स्वक्षेत्रं गतवांस्तदा ॥२१॥
 तत्क्षेत्रं कर्षणायोग्यं मत्वा भट्टारकं प्रति। ब्राह्मण्याः कथयेत्स्वं मे भर्ता ते गतवान्ध्रुवम् ॥२२॥
 अन्यक्षेत्रमिति व्यक्तं प्रोक्त्वा मूढाशयो गतः। अहो प्राणी न जानाति मूढो मार्गं महामुनेः ॥२३॥
 ब्राह्मण्या च समागत्य पृष्ठोसौ मुनिसत्तमः। स्वामी मौनेन संयुक्तः संस्थितः सा गृहं गता ॥२४॥
 तदा महाक्षुधाक्रान्तो विप्रो वेलाव्यतिक्रमे। गृहमागत्य कोपेन स्वकान्तां कटुकं जगौ ॥२५॥
 रे रे रंडे मृतोद्याहं क्षुधापीडितविग्रहः। पृष्ठा तं नग्नकं शीघ्रं समायातासि किं न हि ॥२६॥
 तयोक्तं भीतितो देव मया पृष्ठोऽपि निस्पृहः। किंचिन्नैव मुनिः प्राह ततोहं गृहमागता ॥२७॥

उसे बहुत प्यार करते थे। जब उसकी उमर योग्य हो गई और सब कामों में वह होशियार हो गया तब जिनेन्द्र भगवान् के सच्चे भक्त उसके पिता गुरुदत्त ने अपना राज्यभार इसे देकर आप वैरागी बन मुनि हो गए। इसके कुछ वर्षों बाद अनेक देशों, नगरों और गाँवों में धर्मोपदेश करते, भव्य-जनों को सुलटाते एक बार चन्द्रपुरी की ओर आए ॥१६-१९॥

एक दिन गुरुदत्त मुनि कपिल ब्राह्मण के खेत पर कायोत्सर्ग ध्यान कर रहे थे। उसी समय कपिल घर पर अपनी स्त्री से यह कह कर, कि प्रिये, मैं खेत पर जाता हूँ, तुम वहाँ भोजन लेकर जल्दी आना, खेत पर आ गया। जिस खेत पर गुरुदत्त मुनि ध्यान कर रहे थे, उसे तब जोतने योग्य न समझ वह दूसरे खेत पर जाने लगा। जाते समय मुनि से वह यह कहता गया कि मेरी स्त्री यहाँ भोजन लिए हुए आवेगी सो उसे आप कह दीजियेगा कि कपिल दूसरे खेत पर गया है। तू भोजन वहीं ले जा, सच है, मूर्ख लोग महामुनि के मार्ग को न समझ कर कभी-कभी बड़ा ही अनर्थ कर बैठते हैं। इसके बाद जब कपिल की स्त्री भोजन लेकर खेत पर आई और उसने अपने स्वामी को खेत पर न पाया तब मुनि से पूछा-क्यों साधु महाराज, मेरे स्वामी यहाँ से कहाँ गए हैं? मुनि चुप रहे, कुछ बोले नहीं। उनसे कुछ उत्तर न पाकर वह घर पर लौट आयी। इधर समय पर समय बीतने लगा ब्राह्मण देवता भूख के मारे छटपटाने लगे पर ब्राह्मणी का अभी तक पता नहीं; यह देख उन्हें बड़ा गुस्सा आया। वे क्रोध से गुराते हुए घर आये और लगे बेचारी ब्राह्मणी पर गालियों की बौछार करने। राँड, मैं तो भूख के मारे मरा जाता हूँ और तेरा अभी तक आने का ठिकाना ही नहीं। उस नंगे को पूछकर खेत पर चली आती। बेचारी ब्राह्मणी घबराती हुई बोली-अजी तो इसमें मेरा क्या अपराध था। मैंने उस साधु से तुम्हारा ठिकाना पूछा। उसने कुछ न बताया तब मैं वापस घर पर आ गई। ब्राह्मण ने दाँत पीसकर कहा-हाँ, उस नंगे ने तुझे मेरा ठिकाना नहीं बताया और मैं तो उससे कह गया था। अच्छा, मैं अभी जाकर उसे उसका मजा चखता हूँ। पाठकों को याद होगा कि कपिल पहले जन्म में सिंह था और उसे इन्हीं गुरुदत्त मुनि ने राज अवस्था में जलाकर मार डाला था तब इस हिसाब से कपिल के वे शत्रु हुए। यदि

तदा तेन प्ररुष्टेन पापिना कपिलेन च। तत्रागत्य मुनिं वेष्टयित्वा शात्मलितूलकैः ॥२८॥
 अग्निः प्रज्वालितस्तीव्रं तदासौ च मुनीश्वरः। शुक्लध्यानाग्निना शीघ्रं घातिकर्मन्धनोत्करम् ॥२९॥
 भस्मीकृत्वा जगत्यूज्यं केवलज्ञानमाप्तवान्। तदा देवागमे जाते पुष्पवृष्टिं प्रकुर्वति ॥३०॥
 ब्राह्मणोसौ महाश्चर्यं सम्प्राप्तः कपिलस्ततः। नत्वा तं केवलज्ञानि-गुरुदत्तं जिनेश्वरम् ॥३१॥
 धर्ममाकर्ण्य जैनेन्द्रं सुरासुरसमर्चितम्। कृत्वात्मनिन्दनं तत्र मुनिर्भक्त्या बभूव सः ॥३२॥
 अहो भव्याः सतां नित्यं संगतिः शर्मदायिनी। क्वासौ विप्रो महातीव्रः क्व जातस्तु मुनिस्तराम् ॥३३॥
 ततो भव्यैः प्रकर्तव्यं साधुसंगैर्निजं कुलम्। पवित्रं परमानन्दो जायते येन शर्मदः ॥३४॥

स जयतु जिनदेवः सर्वदेवेन्द्रवन्द्यस्त्रिभुवनसुखकर्ता विश्वसन्देहहर्ता।

स्थिरतरगुरुदत्तः प्राप्तनित्यस्वभावो मम दिशतु सुखानि श्रीप्रभाचन्द्रदेवः ॥३५॥

इति कथाकोशे श्रीगुरुदत्तमुनेराख्यानं समाप्तम्।

कपिल को किसी तरह यह जान पड़ता कि ये मेरे शत्रु हैं, तो उस शत्रुता का बदला उसने कभी का ले लिया होता पर उसे इसके जानने का न तो कोई जरिया मिला और न था ही। तब उस शत्रुता को जाग्रत करने के लिए कपिल की स्त्री को कपिल के दूसरे खेत पर जाने का हाल जो मुनि ने न बताया, यह घटना सहायक हो गई। कपिल गुस्से से लाल होता हुआ मुनि के पास पहुँचा। वहाँ बहुत सी सेमल की रुई पड़ी हुई थी। कपिल ने उस रुई से मुनि को लपेट कर उसमें आग लगा दी। मुनि पर बड़ा उपसर्ग हुआ। पर उसे उन्होंने बड़ी धीरता से सहा। उस समय शुक्लध्यान के बल से घातिया कर्मों का नाश होकर उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया। देवों ने आकर उन पर फूलों की वर्षा की, आनन्द मनाया। कपिल ब्राह्मण यह सब देखकर चकित हो गया। उसे तब जान पड़ा कि जिन साधु को मैंने अत्यन्त निर्दयता से जला डाला उनका कितना माहात्म्य था। उसे अपनी इस नीचता पर बड़ा ही पछतावा हुआ। उसने बड़ी भक्ति से भगवान् को हाथ जोड़कर अपने अपराध की उनसे क्षमा माँगी। भगवान् के उपदेश को उसने बड़े चाव से सुना। उसे वह बहुत रुचा भी। वैराग्यपूर्ण भगवान् के उपदेश ने उसके हृदय पर गहरा असर किया। वह उसी समय सब छोड़ कर अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिये मुनि हो गया। सच है, सत्पुरुषों-महात्माओं की संगति सुख देने वाली होती है। यही तो कारण था कि एक महाक्रोधी ब्राह्मण पल भर में सब छोड़कर योगी बन गया। इसलिये भव्य-जनों को सत्पुरुषों की संगति से अपने को, अपनी सन्तान को और अपने कुल को सदा पवित्र करने का यत्न करते रहना चाहिए। यह सत्संग परम सुख का कारण है ॥२०-३४॥

वे कर्मों के जीतने वाले जिनेन्द्र भगवान् सदा संसार में रहें, उनका शासन चिरकाल तक जय लाभ करे जो सारे संसार को सुख देने वाले हैं, सब सन्देहों के नाश करने वाले हैं और देवों द्वारा जो पूजा स्तुति किये जाते हैं तथा दुःसह उपसर्ग आने पर भी जो मेरु की तरह स्थिर रहे और जिन्होंने अपना आत्मस्वभाव प्राप्त किया ऐसे गुरुदत्त मुनि तथा मेरे परम गुरु श्रीप्रभाचन्द्राचार्य, ये मुझे आत्मीक सुख प्रदान करें ॥३५॥

७०. चिलातपुत्रस्याख्यानम्

चञ्चत्सत्केवलज्ञानलोचनं श्रीजिनेश्वरम्। नत्वा चिलातपुत्रस्य चरित्रं रचयाम्यहम् ॥१॥
 पुरे राजगृहे राजाभवत्प्रश्रेणिको महान्। एकदा पुरबाह्येऽसौ निर्गतो निजलीलया ॥२॥
 दुष्टाश्वेन ततो नीतो महाटव्यां प्रवेगतः। तत्रस्थयमदण्डस्य महाटव्या महीपतेः ॥३॥
 तिलकादिवतीं कन्यां दृष्ट्वा सद्रूपशालिनीम्। तदा कन्दर्पबाणेन विद्धोसौ भूपतिस्तराम् ॥४॥
 प्रोक्तं च यमदण्डेन हे नरेन्द्र विचक्षण। अस्याः पुत्राय चेद्राज्यं दीयते भवता ध्रुवम् ॥५॥
 तदा तुभ्यं ददाम्येतां स्वपुत्रीं तिलकावतीम्। तच्छ्रुत्वेवं करिष्यामि प्रोक्त्वा चेति महीपतिः ॥६॥
 तां कन्यां परिणीयोच्चैस्ततः प्रश्रेणिकः सुधीः। प्राप्तो राजगृहाख्यं च स्वपुरं प्रमदान्वितः ॥७॥
 नाना भोगान्प्रभुञ्जानो यावत्संतिष्ठते प्रभुः। पुत्रं चिलातपुत्राख्यं प्रसूता तिलकावती ॥८॥
 एकदा च नरेन्द्रेण पृष्टो नैमित्तिको महान्। अहो मे बहुपुत्राणां मध्ये को भाविभूपतिः ॥९॥

७०. चिलात-पुत्र की कथा

केवलज्ञान जिनका प्रकाशमान नेत्र हैं, उन जिन भगवान् को नमस्कार कर चिलातपुत्र की कथा लिखी जाती है ॥१॥

राजगृह के राजा उपश्रेणिक एक बार हवाखोरी के लिए शहर से बाहर गए। वे जिस घोड़े पर सवार थे, वह बड़ा दुष्ट था। सो उसने उन्हें एक भयानक वन में जा छोड़ा। उस वन का मालिक एक यमदण्ड नाम का भील था। उसके एक लड़की थी। उसका नाम तिलकवती था। वह बड़ी सुन्दरी थी। उपश्रेणिक उसे देखकर काम के बाणों से अत्यन्त बंधे गये। उनकी यह दशा देखकर यमदण्ड ने उनसे कहा-राजाधिराज, यदि आप इससे उत्पन्न होने वाले पुत्र को राज्य का मालिक बनाना मंजूर करें तो मैं इसे आपके साथ ब्याह सकता हूँ। उपश्रेणिक ने यमदण्ड की शर्त मंजूर कर ली। यमदण्ड ने तब तिलकवती का ब्याह उनके साथ कर दिया। वे प्रसन्न होकर उसे साथ लिये राजगृह लौट आये ॥२-७॥

बहुत दिनों तक उन्होंने तिलकवती के साथ सुख भोगा, आनन्द मनाया। तिलकवती के एक पुत्र हुआ। इसका नाम चिलातपुत्र रखा गया। उपश्रेणिक के पहली रानियों से उत्पन्न हुए और भी कई पुत्र थे। यद्यपि राज्य वे तिलकवती के पुत्र को देने का संकल्प कर चुके थे, तो भी उनके मन में यह खटका सदा बना रहता था कि कहीं इसके हाथ में राज्य जाकर धूलधानी न हो जाये। जो हो, पर वे अपनी प्रतिज्ञा के न तोड़ने को लाचार थे। एक दिन उन्होंने एक अच्छे विद्वान् ज्योतिषी को बुलाकर उससे पूछा-पंडित जी, अपने निमित्तज्ञान को लगाकर मुझे आप यह समझाइए कि मेरे इन पुत्रों में राज्य का मालिक कौन होगा? ज्योतिषी जी बहुत कुछ सोच-विचार के बाद राजा से बोले-सुनिये महाराज, मैं आपको इसका खुलासा कहता हूँ। आपके सब पुत्र खीर का भोजन करने को एक जगह बिठाएँ जायें और उस समय उन पर कुत्तों का एक झुंड छोड़ा जाये। तब उन सबमें जो